मनुका खन्ना

साभार: मनुका खन्ना

राजनीतिक बराबरी
समय की ज़रूरत

भारतीय गणराज्य ने अपनी यात्रा स्वतंत्रता, बराबरी और न्याय के आदर्शों के साथ शुरू की जिनसे भारतीय महिलाओं ने खुद को सुरक्षित महसूस किया और उनमें अपने अस्तित्व, बराबरी के व्यवहार और अवसरों की उम्मीद जगी। लेकिन बराबरी के नागरिक होने का उनका सपना आज भी अधूरा है। संविधान की प्रगतिशील दृष्टि लिंग आधारित भेदभाव की जटिलताओं के समाधान में अपर्याप्त साबित हुई है।

महिलाओं की स्वायत्तता और पूर्ण नागरिक के बतौर उनके काम करने को स्वीकार करने की चेतना बढ़ रही है। किसी भी समाज में राजनीतिक भागीदारी, निर्णय लेने वाली संस्थाओं में प्रतिनिधित्व और हिस्सेदारी महिलाओं की स्थिति के महत्वपूर्ण सूचक होते हैं।

आज़ादी से पहले भारत में महिलाओं ने 1917 में ही मताधिकार की मांग की थी और उन्होंने उपनिवेशवाद और साथ में पितृसत्तात्मक और परंपरावादी समाज के खिलाफ साहस के साथ संघर्ष छेड़ा। राष्ट्र की आज़ादी के साथ ही महिलाओं को भी मताधिकार मिला। संवैधानिक प्रावधानों और विधायी सुरक्षा के चलते महिलाएं निर्वाचित पदों और नियुक्तियों में बड़ी संख्या में पहुंचने लगीं। भारत में एक महिला प्रधानमंत्री बनी और कई महिलाएं मुख्यमंत्री बनीं। महिला सशक्तीकरण वर्ष मनाना, महिलाओं के लिए पंचायतों में 33 फ़ीसदी आरक्षण और संसद में इसी तरह के आरक्षण का प्रस्ताव, ये सही दिशा में उठाए गए कदम हैं।

वैसे आमतौर पर राजनीति में महिलाओं की भागीदारी कम है। उन्होंने नागरिक और सामाजिक-सामुदायिक प्रयासों के बतौर स्वयंसेवक, चुनावी राजनीति में राजनीतिक पत्नियों, पार्टी वफ़ादारों और मतदाता की भूमिका निभाई है। लेकिन राजनीतिक निर्णय प्रक्रिया में उनका स्थान पुरुषों के अधीन रहा है।

सिर्फ भ्रष्ट और प्रभावी परिवारों के एक छोटे वर्ग या इनके द्वारा समर्थित महिलाएं ही राजनीति की मुख्यधारा में शामिल हो पाई हैं।

एक बाधा यह है कि भारत में राजनीति का अर्थ है अस्वस्थ प्रतिस्पर्धा, शारीरिक ताकत का प्रदर्शन और सत्ता के लिए लालच और संघर्ष। महिलाओं को सामाजिक रूप से यही बताया गया है कि राजनीति पुरुषों का अखाड़ा है, गंदा खेल है और वे इसके हाशिये पर ही रही हैं। लेकिन यह उनके द्वारा चुना गया विकल्प नहीं है। भारतीय संस्कृति महिलाओं को मूल तौर पर बच्चों के लालन-पालन और उनकी देखभाल का ज़िम्मा सौंपती है। इसीलिए उनमें इस तरह का मनोविज्ञान विकसित हो गया है और वे देखभाल करने वाली और निजी दायरे यानी घर में सीमित होने की भूमिका चुन लेती हैं।

किसी भी भारतीय महिला की ज़िंदगी में परिवार बहुत महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। माना जाता है कि उनकी पहचान और जीवन में उनका रास्ता, पिता, भाई या पति द्वारा तय किया जाएगा। महिलाओं का सीमित राजनीतिक प्रशिक्षण और सामाजिक मेलजोल परिवार और घर के दायरे में ही होता है।

महिलाओं का पृथक रहना, लैंगिक रूप से अलग-थलग होना, लैंगिक आधार पर श्रम विभाजन की कड़ी परिपाटी, महिलाओं और पुरुषों के काम का उनके स्वभाव के अनुकूल ''प्रकृति के अनुरूप'' होना और लैंगिक संबंधों के कई अन्य बारीक पहलू ऐसी विचारधाराओं और परंपराओं को तय करते हैं जिनसे महिलाएं हाशिये पर पहुंच जाती हैं।

राजनीति के क्षेत्र में भी लिंग आधारित खाई है। सिर्फ उम्मीदवारों के चयन में ही नहीं, मतदान के मामले में भी। यह मसला मुख्यत: अशिक्षा से जुड़ा है। मतदान संबंधित अभियान के अभाव और अशिक्षित महिलाओं समेत सभी महिलाओं द्वारा अपने मताधिकार के संवैधानिक अधिकार के इस्तेमाल और अपना नेता चुनने से संबंधित औपचारिकताएं निभाने को प्रोत्साहन न मिलना इसका कारण है। जिन लोगों की ड्यूटी महिलाओं की मदद करने की होती है, उनकी लापरवाही से स्थिति और गंभीर हो जाती है।

पितृसत्तात्मकता को ऐसी बाधा नहीं समझा जाना चाहिए जिस पर पार नहीं पाया जा सके। इससे संघर्ष किया जाना चाहिए। शिक्षा, वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास, पुरुषों में जाग्रति और महिलाओं का अपनी क्षमता को पहचानना इस दिशा में प्रभावी शक्तियां हैं। महिलाओं के नेतृत्व को मज़बूत कर, उनके आत्मविश्वास और उत्साह को बढ़ाकर और उन्हें सूचनाएं उपलब्ध कराकर स्थिति बदली जा सकती है। सिर्फ मसला संख्या का नहीं है। सफलता उन तरीकों में है जिनके ज़रिये महिलाएं किसी समस्या को देखती हैं और उनके प्रभावी समाधान तलाशती हैं।

समाज में महिलाओं की स्थिति मज़बूत करने के लिए पुरुषों और महिलाओं की बराबरी की भागीदारी की ज़रूरत है। यह सिर्फ सामान्य न्याय या लोकतंत्र की मांग नहीं है, बल्कि मानव अस्तित्व के लिए आवश्यक शर्त है। राजनीति और निर्णय लेने वाले तंत्र में महिलाओं का प्रवेश संस्थानों की नीतियों, दृष्टि और उनके तानेबाने में तब्दीली ला सकता है। वे राजनीतिक प्रक्रियाओं को नए सिरे से परिभाषित कर सकती हैं और लिंग आधारित चिंताओं के समाधान के लिए राजनीतिक एजेंडे पर नए मसले प्रस्तुत कर सकती हैं। इसके अलावा मुख्यधारा की राजनीति से जुड़े मुद्दे को नया आयाम दे सकती हैं। विकास तभी हो सकता है जब महिलाओं को निर्णय लेने वाली भूमिका दी जाए। शिक्षा और इस तरह के अवसरों के मेल से सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक बाधाओं पर पार पाया जा सकता है और महिलाएं आत्मसंकल्प की ओर अग्रसर हो सकती हैं।

मनुका खन्ना *लखनऊ विश्वविद्यालय के राजनीतिक विज्ञान विभाग में रीडर हैं और महिला अध्ययन संस्थान में अतिथि शिक्षक के रूप में पढ़ाती हैं।*

कृपया इस लेख के बारे में अपने विचार editorspan@state.gov पर भेजें।